**ओ३म्**

**‘मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम सहित महर्षि वाल्मिकी भी विश्व के आदरणीय एवं पूज्य’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

हमारे पौराणिक भाईयों ने **वैदिक वा आर्य गुण सम्पन्न मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम चन्द्र जी** को ईश्वर का अवतार स्वीकार किया है और अपने मन्दिरों में उनकी मूर्ति स्थापित कर पूजा अर्चना करते हैं। अनुमान है कि विगत ढाई हजार वर्षों में, जब भी मूर्ति पूजा का आरम्भ हुआ, सबसे पहले जिस महापुरूष की मूर्ति की पूजा आरम्भ की गई उनमें प्रथम श्री राम चन्द्र जी ही रहे हैं। योगेश्वर श्री कृष्ण जी को भी अपना आराध्य देव बनाया गया और इनकी मूर्ति की पूजा का इतिहास भी श्री राम के समान पुराना व उसके किंचित बाद का हो सकता है। 6 गुणों वा ऐश्वयों से सम्पन्न होने के कारण श्री राम भगवान कहे व माने जाते हैं। आर्यसमाज को भी श्री राम को भगवान कहने पर शास्त्रीय दृष्टि से कोई आपत्ति नहीं है। हम भी राम चन्द्र जी को भगवान कहते हैं परन्तु वह इस सृष्टि की रचना व उसका पालन करने वाले ईश्वर जो कि सच्चिदानन्द, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, निराकार, अनादि, अनुत्पन्न, अजन्मा, सर्वशक्तिमान तथा जीवात्माओं को उनके कर्मानुसार जन्म देने वाला है, वह ईश्वर नहीं थे, अपितु सर्वश्रेष्ठ जीवात्मा थे। यजुर्वेंद के अध्याय 40 के मन्त्र 14 में ईश्वर को स्पष्ट रुप से अजन्मा बताया गया है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है और इस बात को हमारे पौराणिक बन्धु भी स्वीकार करते हैं। अब यदि ईश्वर स्वयं यह कहे कि मैं जन्म नहीं लेता या मैं अजन्मा हूं तो फिर उसका जन्म मानना, हमारी बुद्धि में विवेक न होने के कारण ही सम्भव है। महर्षि दयानन्द ने इस विषय पर सत्यार्थ प्रकाश में सम्यक प्रकाश डाला है। **जो भी हो, ईश्वर सारे संसार के सभी लोगों का समान रूप से उपासनीय है।** सभी को उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना प्रातः व सायं, दोनों समय तो करनी ही है। इसके साथ यदि कभी मनुष्य को खाली समय मिले तो ईश्वर के निज नाम **‘‘ओ३म्”** का जप मन, ज्ञान व ध्यान पूर्वक करना चाहिए। इतिहास में हुए आदर्श पुरूषों में भगवान राम के आदर्श जीवन को भी बाल्मिकी रामायण में पढ़कर उनके गुणों को अपने जीवन में ढालने का प्रयत्न करना चाहिये। यह वैदिक धर्म के सिद्धान्तों व मान्यताओं के पूर्णतया अनुरूप व अनुकूल है।

 **आज हमें भगवान राम का आदर्श जीवन यदि ज्ञात है तो उसका सारा श्रेय महर्षि वाल्मिकी जी को है।** यदि वह न होते तो आज हम भगवान राम चन्द्र जी के सभी मर्यादाओं से पूर्ण आदर्श जीवन से वंचित होते। महर्षि वाल्मिकी रामचन्द्र जी के समकालीन थे। उनका रामचन्द्र जी के जीवन की घटनाओं से सीधा सम्पर्क व सम्बन्ध अवश्य रहा होगा। उन्होंने अपने विवेक व योग की सिद्धियों से भी उनके जीवन की घटनाओं को प्रत्यक्ष किया होगा, इसका अनुमान होता है। यदि ऐसा न होता तो वाल्मिकी रामायण जैसे विशाल आद्य महाकाव्य का प्रणयन व रचना सम्भव नहीं थी। महर्षि वाल्मिकी जी ने रामायण जैसे महाकाव्य की रचना कर अपनी जिस क्षमता, योग्यता व सूझबूझ का परिचय दिया है, वह बाद के विद्वानों व महापुरुषों में महर्षि वेदव्यास जी के अतिरिक्त किसी अन्य में दृष्टिगोचर नहीं हुई। यह दोनों ही महापुरूष व महात्मा मानव जाति के लिए पूज्य व स्तुत्य हैं। यह हमारा सौभाग्य है कि श्री रामचन्द्र जी के युग में महर्षि वाल्मिकी जैसे महात्मा भारत की भूमि पर विद्यमान थे जिससे रामायण जैसे आद्य महाकाव्य की रचना सम्भव हो सकी। वाल्मिकी जी के रामायण की रचना के महान व अभूतपूर्व योगदान के लिए सारी धरती के मानव उनके कृतज्ञ है और उनके इस ऋण को हमें सदैव अपनी स्मृति में रखना चाहिये। हमारा कर्तव्य है कि हम रामायण का बार-बार अध्ययन व अधिकाधिक पाठ करें और रामायण में वाल्मिकी जी द्वारा दर्शाये गये श्री रामचन्द्र जी के पावन चारित्रिक गुणों को जानकर उन्हें अपने जीवन में धारण करें। यदि ऐसा नहीं करते तो हम वाल्मिकी जी के तो ऋणी रहेंगे ही, साथ हि हम श्री रामचन्द्र जी के आदर्श जीवन की अनुपस्थिति में श्रेष्ठ मनुष्य नहीं बन सकेंगे।

 **वाल्मिकी जी के नाम के साथ प्राचीन समय से महर्षि शब्द सुशोभित है जिससे ज्ञात होता है कि वह वेदों के उच्च कोटि के विद्वान व महात्मा थे। महर्षि शब्द का प्रयोग वेदों के ज्ञान को आत्मसात कर उसके अनुरूप आचरण करने वाले निर्भीक व साहसी मनुष्य जो कर्मों व आचरण से पूर्ण धर्मात्मा, योगी व आप्त पुरुष हों, के लिए ही प्रयोग में लाया जाता है। अतः महर्षि वाल्मिकी अपने समय के वेदों के उच्च कोटि के विद्वान व महात्मा थे। निश्चय ही वह ईश्वर का ध्यान व सन्ध्या करते थे, यज्ञ करते थे, वेदों का अध्ययन, उनका अध्यापन व प्रचार- प्रसार करते थे। अज्ञान का नाश और ज्ञान का प्रकाश वा प्रचार ही उनके जीवन का उद्देश्य था। वह सच्चे ब्राह्मण व अपने समय के सभी ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्यादि जनों के सर्वपूज्य विद्वान वा महात्मा थे।** हमें नहीं लगता कि वह शूद्र वर्ण में जन्में होंगे। यह सम्भव हो सकता है परन्तु संदिग्ध है। लाखों वर्ष पूर्व हुए महर्षि महात्मा वाल्मिकी जी के ठीक ठीक इतिहास का ज्ञान होना सम्भव नहीं है। इस पर कोई प्रामाणिक ग्रन्थ भी उपलब्ध नहीं है। बाद में मध्यकाल में लोगों ने उनके बारे में किंवदन्तियां प्रचलित कर दी। जो सत्य भी हो सकती हैं और नहीं भी। यदि वह सत्य भी हों तो भी इससे वाल्मिकी जी की योग्यता, ऋषित्व में व उनके समस्त मानवजाति के पूज्य होने में कहीं कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती। इससे तो वह और भी अधिक गौरवान्वित होते हंै। श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न होकर श्रेष्ठ बनना सरल है परन्तु निम्न कुल में उत्पन्न होकर उस श्रेष्ठता की चरम पर पहुंचना जहां श्रेष्ठ कुलों के लोग भी अपवाद स्वरूप पहुंचते हैं, यह बहुत बड़ी उपलब्धि होती है। यदि ऐसा है तो यह सोने में सुहागा जैसी बात है। अतः महर्षि बाल्मिकी ब्राह्मणों, पौराणिक गुरुओं, सभी आर्य वर्णो व संसार के लोगों के पूज्य हैं। हम यद्यपि मूर्तिपूजा को वेदसम्मत व करणीय नहीं मानते फिर भी परिस्थितियों के अनुरुप हम यह आवश्यक समझते हैं कि रामचन्द्र जी के मन्दिरों में महर्षि वाल्मिकी जी का चित्र आदर व सम्मानपूर्वक रखा जाये जिससे भक्तों व दर्शकों को यह ज्ञान हो कि श्री रामचन्द्र जी के आदर्श, धवल व निष्पाप चरित्र को प्रकाश में लाने वाले महर्षि वाल्मिकी जी हैं।

 यदा कदा ऐसी घटनायें भी सुनने को मिलती है कि किन्हीं पौराणिक मन्दिरों में ईश्वर के प्रिय हरिजन भाईयों को पण्डित-पुजारियों ने प्रवेश नहीं करने दिया। हमें यह कार्य अमानवीय लगता है। ईश्वर व उसके अवतार के पास पहुंचने का ईश्वर द्वारा उत्पन्न प्रत्येक प्राणी को स्वतः सिद्ध अधिकार है। पिता-पुत्र के संबंधों की भांति बिचैलियों की इसमें कहीं कोई आवश्यकता नहीं होती। मन्दिरों व मूर्तियों को बनाने वाले अधिकांशतः हमारे हरिजन भाई ही होते हैं। उनको ही मन्दिर में प्रवेश करने से रोकना कुछ नासमझ लोगों का अमानवीय कार्य ही कहा जा सकता है। वेद व सत्शास्त्रों से अनभिज्ञ किसी भी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है कि धर्म की मर्यादायें व व्यवस्थायें बताये। मनुष्य छोटा व बड़ा कर्म से होता है न कि जन्म से। जन्म से तो सभी शूद्र उत्पन्न होते है **‘जन्मना जायते शूद्रः संस्कार द्विज उच्यते’**, यह शास्त्रों का कथन वा विधान है। संस्कार वा सद्गुण ही मनुष्यों को द्विज बनाते हैं। मनुस्मृति में भी कहा गया है कि **‘शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम। क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च।।’** अर्थात् जो शूद्रकुम में उत्पन्न होकर ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य के समान गुण, कर्म, स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाय। वैसे ही जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यकुल में उत्पनन हुआ हो और उसके गुण-कर्म-स्वभाव शूद्र के सदृश हों तो वह शूद्र हो जायं। वैसे क्षत्रिय-वैश्य के कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण वा शूद्र के समान होने से ब्राह्मण और शूद्र भी हो जाता है। अर्थात् चारों वर्णों में जिस जिस वर्ण के सदृश जो जो पुरुष या स्त्री हो, वह वह उसी वर्ण में मानी जावें। यह भी निवेदन है कि हमारे पण्डित-पुजारियों को भी अपने जीवन व आचरण पर ध्यान देना चाहिये कि वह किस सीमा तक वेदानुकूल वा वेदसम्मत शास्त्रानुकूल हैं। बिना वेद पढ़े व उसका ज्ञान प्राप्त किये, हमारी दृष्टि में कोई पण्डित कहलाने का अधिकारी नहीं होता। यह मध्यकाल से पूर्व तक की लगभग 2 अरब वर्षों की परमपरा है जिसका दिग्दर्शन वेद मर्मज्ञ महर्षि दयानन्द ने वर्तमान युग में कराया है। हम आशा करते हैं हमारा पौराणिक समाज मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम चन्द्र जी की वैदिक पूजा के साथ समाज में महर्षि वाल्मिकी जी को भी यथोचित सम्मान देगा। यह मनुष्य के अपने हित, समाज हित व देश हित में है। इसके साथ हम यह भी अनुभव करते हैं कि प्रत्येक मूर्तिपजक व महर्षि दयानन्द भक्त को बाल्मिकी मन्दिरों में जाकर वहां के बहिन, भाईयों व बच्चों से मधुर सम्बन्ध स्थापित कर उन्हें सत्यार्थ प्रकाश व संक्षिप्त बाल्मीकि रामायण जैसी पुस्तकों को पढ़ने के साथ सन्ध्या व हवन करने की प्रेरणा भी करनी चाहिये। ऐसा करके कोई व्यक्ति छोटा नहीं होता है अपितु यही मनुष्य होने की कसौटी है।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**